

कोर्ट में तलाक के प्रावधान की मानवीय व्याख्या

हेरिफ म्यूक, 4-12-15

सुप्रीम कोर्ट के सामने एक ऐसा मामला आया, जिसमें गंभीर रूप से बीमार पत्नी ने 12.5 लाख रुपए लेने के बाद तलाक के लिए सहमति दे दी थी। आधुनिक भारतीय कानून के मुताबिक पति-पत्नी की आपसी रजामंदी तलाक का वैध आधार है, लेकिन इस दंपती की विशेष परिस्थितियों को देखते हुए न्यायालय ने तलाक की अर्जी स्वीकार नहीं की। सुप्रीम कोर्ट में न्यायमूर्ति एमवाई इकबाल की अध्यक्षता वाली खंडपीठ ने फैसला दिया कि तलाक की अर्जी पर अदालत पत्नी के ठीक होने के बाद ही विचार कर सकती है। कोर्ट ने आशंका जताई कि पत्नी को इलाज के लिए धन की जरूरत है, अतः मुमकिन है कि उसने साढ़े बारह लाख की रकम पाने के लिए पति से अलगाव पर सहमति दे दी हो। यानी संभव है कि पति बीमार पत्नी से पीछा छुड़ाने की फिराक में हो। अतः पत्नी के जिस दस्तखत को उसकी सहमति बताया जा रहा है, हो सकता है कि वह पति द्वारा की गई सौदेबाजी का परिणाम हो। रिश्तों में ऐसा नजरिया सिरे से गैर-इनसानी है। वाजिब ही है कि कोर्ट ने इसे मंजूर नहीं किया। इसके विपरीत उसने हिंदू परिवारों में स्त्री जिस सांस्कृतिक परिवेश में रहती है, उसे विचारणीय माना और कहा कि हिंदू (समाज में) विवाह पति और पत्नी का पवित्र मिलन है, जिसमें पत्नी संपूर्णतः पति के घर को अपना लेती है। वहां उसका नया जन्म होता है। हिंदू पत्नी के लिए पति ही उसका भगवान है। उसकी जिंदगी पति की निस्वार्थ सेवा और गहन समर्पण में गुजरती है। वह पति के जीवन एवं गतिविधियों की अभिन्न अंग बन जाती है। खंडपीठ ने इसके मददेजर कहा कि जब पत्नी गंभीर बीमारी से ग्रस्त हो, तब आवश्यकता है कि पति उसके साथ खड़ा हो। साफ है, कोर्ट ने लकीर का फकीर बनकर कानून का पालन करने का पक्ष नहीं लिया, बल्कि इसे ध्यान में रखा कि आपसी सहमति से तलाक का प्रावधान दंपत्य रिश्ते में दो व्यक्तियों की इच्छा को सर्वोपरि मानने के लिए किया गया है, लेकिन सिर्फ पूर्ण सक्षम एवं स्वतंत्र व्यक्ति ही वास्तव में अपनी मर्जी के मुताबिक निर्णय ले सकते हैं। जब एक पक्ष बीमारी के कारण अशक्त अवस्था में हो, तब इस प्रावधान का दुरुपयोग संभव है, जैसा कि उपरोक्त मामले में होने के संकेत मिले। अतः कोर्ट ने कानून की भाषा की बजाय उसकी भावना को महत्व दिया। न्याय के लिए कानून की उचित व्याख्या का उतना ही महत्व है, जितना इसे लागू करने का। इससे एक मानवीय वैधानिक व्यवस्था कायम हुई है।

संसद में संविधान
पर व्यापक
चर्चा के साथ
ही अन्य
आवश्यक
उपायों को रेखांकित
कर रहे हैं



▲ सुभाष कश्यप ▲

संविधान पर बहस ही पर्याप्त नहीं

इसका मतलब 4-12-15

संसद में संविधान दिवस के अवसर पर बहस और इस दौरान पक्ष-प्रतिपक्ष द्वारा अपने-अपने विचारों का आदान-प्रदान एक स्वागतयोग्य और एक अच्छी पहल है। चूंकि आज भी बहुत से भारतीयों को संवैधानिक उपायों-प्रावधानों और उसकी विशेषताओं को लेकर बहुत ही अल्प जानकारी है इसलिए संविधान दिवस का निर्णय एक अच्छा कदम है। इसके लिए वर्तमान सरकार को बधाई दी जानी चाहिए, परंतु हमें यह भी समझना होगा कि संविधान दिवस के अवसर पर केवल संसद में चर्चा से बात नहीं बनने वाली। सरकार को चाहिए कि इस चर्चा को आम लोगों के बीच भी ले जाया जाए और संवैधानिक

रास्ता निकालना होगा। संसद में लोकहित के संवालों को सहमति के सूत्र से ही हल किया जाना चाहिए, लेकिन जानबूझकर सरकार के कामकाज में बाधा पैदा किया जाना भी ठीक नहीं। यदि आम नागरिकों को संसदीय कार्यप्रणाली और संवैधानिक प्रावधानों के बारे में जागरूकता होगी तो वह वास्तविकता को बेहतर रूप में समझ सकेंगे। इससे नेताओं पर भी यह दबाव बनेगा कि संसद में उनके कार्य व्यवहार का आकलन जनता कर रही है और उसका खामियाजा उन्हें चुनावों में भुगतना पड़ सकता है। इसका सकारात्मक प्रभाव होगा और संसदीय कार्यप्रणाली में सुधार आएगा। इसके लिए यह जरूरी है कि ग्रामीण और शहरी इलाकों के साथ साथ झोपड़ी और झुगियों में रहने वाले नागरिकों को भी इससे अवगत कराया जाए कि उनका संविधान क्या कहता है? ऐसा करने पर ही संविधान दिवस मनाने का महत्व है, अन्यथा वह संसद में बहस तक सीमित होकर रह जाएगा। संसद में संविधान पर बहस के दौरान के सेक्युलर शब्द को संविधान में शामिल करने और उसके वास्तविक अर्थ को लेकर भी बहस देखने को मिली। मेरे विचार

असहिष्णुता का विवाद भी इन दिनों गरमाया हुआ है। यह आज एक राजनीतिक मसला है, लेकिन संवैधानिक तौर पर देखा जाए तो दुनिया के किसी भी देश के संविधान में असहिष्णुता के लिए कोई स्थान नहीं है और न ही इसे कहीं कोई वैधानिक-संवैधानिक स्वीकृति है। भारतीय संविधान के निर्माताओं के योगदान को लेकर भी संसद में चर्चा की गई। इस क्रम में डॉ. भीमराव अंबेडकर के प्रमुख योगदान को भुलाया नहीं जा सकता, लेकिन ऐसा करते वक्त हमें नहीं भूलना चाहिए कि संविधान का निर्माण भारत की

जनता ने मिलकर किया। संविधान निर्माण के समय विभिन्न माध्यमों से आम लोगों और संस्थाओं से विभिन्न विषयों पर उनके मत आमंत्रित किए गए और उनके आधार पर ही संविधान सभा ने अंतिम निर्णय लिए। चूंकि अंबेडकर प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे इसलिए उनकी यह महती जिम्मेदारी थी कि सभी के विचारों-भावों को संविधान में स्थान मिले और इस रूप में उन्होंने निष्पक्ष रहते हुए अपनी विशेष भूमिका का निर्वहन किया।

संविधान के मूल दर्शन में राजेंद्र प्रसाद, सरदार पटेल और जवाहरलाल नेहरू की एक विशिष्ट छाप परिलक्षित होती है। इनके अतिरिक्त केएम मुंशी,

एमए आयोग, टीटी कृष्णामाचारी, कृष्णास्वामी अय्यर आदि-कई अन्य विद्वानों ने भी संविधान निर्माण में अहम योगदान दिया। इन सबके बारे में भी देश को परिचित कराया जाना चाहिए। उनके योगदान के प्रति हमें अनुगृहीत होना चाहिए, न कि व्यर्थ के वाद-विवाद में उलझना चाहिए। जहां तक संविधान में सुधार की गुंजाइश की बात है तो अब तक संविधान में सौ से अधिक सुधार हो चुके हैं और भविष्य में भी तमाम सुधार की संभावना शेष रहेगी, लेकिन यहां हमें प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद की इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि संविधान कैसा भी हो। यह अच्छा हो या बुरा, लेकिन यह देश चलाने वालों पर निर्भर करेगा। यदि हमारे राष्ट्रपति निष्ठावान, ईमानदार और सक्षम होंगे तो हमारा संविधान भी अच्छा होगा और यदि देश चलाने वाले ही अच्छे नहीं होंगे तो हमारा संविधान भी कुछ नहीं कर सकता। (लेखक लोकसभा के पूर्व महासचिव एवं संवैधानिक मामलों के विशेषज्ञ हैं)



साक्षरता को एक अभियान का रूप दिया जाए ताकि सभी देशवासी समझ सकें कि संविधान उनके बारे में क्या कहता है और लोगों के क्या दायित्व हैं? संविधान सिर्फ अधिकारों की ही बात नहीं करता, बल्कि उसमें प्रत्येक नागरिक के 11 मूल कर्तव्य भी बताए गए हैं, जिनका पालन सभी के द्वारा किया जाना आवश्यक है। संविधान के अनुसार उसके आदर्शों और उसकी सभी संवैधानिक संस्थाओं का आदर-सम्मान किया जाना चाहिए। यह सभी का मूल कर्तव्य है।

दुर्भाग्य यह है कि आज संवैधानिक पदों और संसद समेत अन्य संस्थाओं के प्रति आदर भाव कम हुआ है और कई बार तो उनकी अवज्ञा भी की जाती है। इनमें संसद सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था है, जहां सकारात्मक बहस और आम लोगों के मुद्दों पर चर्चा से बचा जाता है और प्रायः गतिरोध की स्थिति देखने को मिलती है। इस सिलसिले में इस तरह की बातें भी सुनने को मिलती हैं कि उच्च सदन निचले सदन यानी लोकसभा के कामकाज में बाधा पैदा करने का काम अधिक करने लगा है इसलिए उसकी शक्तियों को कम किया जाना चाहिए। निश्चित ही यह एक सच्चाई है, लेकिन यह व्यवस्थागत त्रुटि के बजाय एक राजनीतिक मसला है। इसके लिए सभी को मिल-बैठकर कोई

से इस मसले पर अनर्गल वाद-विवाद किया जा रहा है। संविधान में सेक्युलर शब्द का हिंदी अनुवाद पंथनिरपेक्षता ही है, न कि धर्मनिरपेक्षता। इस बारे में आज जनता के बीच भ्रम फैलाने की कोशिश होती है, जो कि सही नहीं। निःसंदेह संविधान की उद्देशिका में सेक्युलर शब्द को बाद में इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में शामिल किया गया, लेकिन इससे संविधान की मूल भावना पर कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता। सेक्युलर शब्द की व्याख्या पश्चिमी देश गैरधार्मिक भाव में करते हैं जबकि हमारे यहां इस शब्द की व्याख्या सर्वधर्म समभाव के रूप में की जाती है। एक तरह से हमारे यहां सेक्युलर शब्द अधिक व्यापक अर्थों को लिए हुए हैं, जो हमें सभी नागरिकों को समान रूप से देखने और उनके साथ समान व्यवहार के लिए प्रेरित करता है। चूंकि संविधान में किसी भी रूप में धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं करने की बात, कही गई है इसलिए इस मुद्दे पर कोई भी बहस बेमानी है। इसी प्रकार



MINISTER VS OFFICER

The Anil Vij-Sangeeta Kalia spat in Haryana underlines the need to build trust

G.P. JOSHI

The Indian Express, 3/12/15

THE PUBLIC SPAT between Haryana Health Minister Anil Vij and the lady IPS officer Sangeeta Kalia has generated considerable debate. Most people have come out in support of the police officer. There is no doubt that the minister was boorish in his behaviour. He had no right to ask the officer to "get out" of a meeting where the performance of the district police in dealing with the sale of spurious liquor was being questioned. Another mistake committed by the minister was to talk harshly to the officer not only in public but also in the presence of the subordinate staff, thereby undermining her authority. The earlier generation of politicians would always talk to officers in private whenever they felt like giving them a piece of their mind. But times have changed. Politicians have become loud-mouthed and arrogant.

However, the police officer's behaviour was equally truculent and confrontational. She showed her immaturity by unnecessarily arguing with the minister, who is after all the people's representative and had every right to listen to public grievance. In this case, an NGO had complained that the police was not doing enough to prevent the sale of spurious liquor. Instead of asking the NGO why it brought the complaint before the minister, the officer should have tried to explain the actions taken in this regard. Instead, she indirectly blamed the government's policies.

Sale of spurious liquor is an important concern not only for the public but also for

The opposition also attempted to turn the incident into a gender issue, which it was not. Former CM Bhupinder Hooda said the minister should have maintained decorum while speaking to a lady officer. Congress spokesperson Shobha Oja said it reflected the 'anti-women mindset' of the BJP dispensation. Actually, gender had nothing to do with it.

every state government. There have been many incidents in different states, where the sale of illegal liquor has caused deaths and the police officials have been found complicit in allowing the sale.

Much like in every other state, the Haryana Police Act of 2007 — Section 24, to be precise — gives the superintendence over the police to the state government. Further, this section allows the state government to "intervene in the exercise of the powers of administration" by the police officers "in accordance with the prescribed rules, regulations or in exceptional circumstances involving urgent public interest". As such, the minister had the authority to exercise superintendence over the police and to ask the head of the district police to explain their actions. He was not giving an illegitimate order.

The state government did what all state governments do in such cases — transfer the officer. It was puerile on the part of the state government's representative to defend the transfer as a routine administrative decision. The transfer was nothing but a slap on the wrist, a warning to the officer to behave. The Congress lost no time in slamming the state government over the transfer, forgetting the number of times its own government transferred Ashok Khemka, an IAS officer in Haryana, over flimsier excuses.

The opposition also attempted to turn the incident into a gender issue, which it was not. Former Chief Minister Bhupinder Singh Ho-

oda said that the BJP minister should have maintained decorum while speaking to a lady officer. Congress leader Manish Tewari said the minister acted in a "crude manner". Congress spokesperson Shobha Oja went a step further, and said it reflected the "anti-women mindset" of the BJP dispensation. Actually, gender had nothing to do with it.

Other opposition parties also tried to politicise the incident. The INLD took out a protest march in Fatehabad and burnt an effigy of the minister. A student organisation in Bhiwandi raised slogans in support of the officer. The National Commission for Scheduled Castes also jumped into the fray, seeking a report on the incident from the government.

The tendency to politicise such incidents reflects our inability and unwillingness to analyse the relationship between political leaders and police officers in an objective manner. Since, in general, we have a poor opinion of our politicians, we tend to view their actions with suspicion. This is not healthy in a democratic society. Questioning the political control over the police, irrespective of whether the interference was legitimate or not, militates against the trust that both parties must share.

The writer is a retired director of the Bureau of Police Research and Development and author of 'Policing in India — Some Unpleasant Essays'

पर्यटन के लिए फिर बढ़ा भारत का आकर्षण!

Knowledge, 4-12-15

अगर आप वैश्विक स्थितियों पर विचार करते हैं तो ऐसा लगता है कि भारत अचानक अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों के लिए विश्व में कम जोखिम वाली जगह बन गया है।

एक साल पहले की तुलना में यह लंबी छलांग है, जब देश को आतंकी घटनाओं, नागरिकों की कमजोर सुरक्षा और महिलाओं की सुरक्षा को लेकर घटती साख के कारण यात्रा के लिए सबसे जोखिम वाली 10 जगहों में शामिल किया गया था। हाल में धारणा में आया यह बदलाव राज्य और केंद्र सरकार के प्रयासों से नहीं आया है। अन्य जगहों की तुलना में भारत का आकर्षण बढ़ने की वजह पर्यटन के लिहाज से ज्यादा लोकप्रिय देशों की सुरक्षा में भारी गिरावट आना है, जिसकी वजह इस्लामिक स्टेट (आईएस) का उन्माद और पश्चिम का पूर्वग्रह है। पिछले सप्ताह आईएस के मुखपत्र- दाबिक में पाठकों को सूचित किया गया था कि संगठन ने शत्रु देशों में आतंक फैलाकर और उनकी अर्थव्यवस्थाओं को बरबाद कर 'जीत' का युग शुरू कर दिया है।

सम्मानित पश्चिमी एशियाई टिप्पणीकार अब्देल बारी अटवान ने अपने ऑनलाइन पत्र राइअल युम में कहा है, 'आईएस ने 100 से अधिक देशों के खिलाफ युद्ध घोषित किया है, जिनमें तीन महाशक्तियां (अमेरिका, रूस, चीन), थोड़े कम शक्तिशाली देश (फ्रांस, ब्रिटेन और जर्मनी) और क्षेत्रीय शक्तियां (जैसे सऊदी अरब एवं ईरान) शामिल हैं।' आईएस का मुख्य निशाना पर्यटन है और यह संयोग नहीं है क्योंकि इसके आसपास के ज्यादातर देश विश्व के शीर्ष 10 पर्यटन स्थलों में शुमार हैं। इनमें फ्रांस सबसे आगे है, जिसने वर्ष 2014 में 8.37 करोड़ पर्यटकों की मेजबानी की थी। इस समय आईएस अल्लाह से डरने वाले सभी जिहादियों के लिए पसंदीदा आतंकी संगठन है और उन्होंने मिस्र, माली, ट्यूनिशिया और पेरिस में दो बार आतंकी हमले कर इसका सबूत दिया है।

इसलिए बालकन्स से लेकर बाल्टिक सागर और अटलांटिक से लेकर प्रशांत महासागर तक और इसके आगे के देशों पर हमले की ज्यादा आशंका है। यहाँ तक की इस्लामी देश मलेशिया और इंडोनेशिया भी चिंतित हैं। इस साल के प्रारंभ में बारी अटवान ने



जिंदगीनामा

कनिका दत्ता

एक साक्षात्कार में मुझे बताया था कि भारत अपनी मजबूत लोकतांत्रिक परंपराओं के कारण आईएस के निशाने पर नहीं है। निस्संदेह अगर देश में उन्माद बढ़ भी रहा है तो यहां की जटिलाएं संभावित आधुनिक 'विजेता' को सफल नहीं होने देंगी (गौर करने वाली बात यह भी है कि आईएस के हिंसक जादू से प्रभावित होने वाले कुछ भारतीय युवा निराश होकर लौट आए हैं)। इसे ग्लोबल बिजनेस ट्रेवल एसोसिएशन (जीबीटीए) के जुलाई के अनुमान से जोड़कर देखें तो ऐसा लगता है कि भारत एक पर्यटन स्थल के रूप में बेहतर स्थिति में है या इसके पास आ रहा है। जीबीटीए ने इसे छह प्रमुख देशों में से एक माना है, जहां कारोबारी यात्रा की मांग बढ़ने से वर्ष 2016 में हवाई किराये में इजाफा होगा। यह अनुमान ऐसे समय जारी किया गया है, जब हवाई यात्रा का किराये में कोई बदलाव नहीं आने के अनुमान जताए जा रहे हैं।

अन्य पांच देश चीन, कंबोडिया, मैक्सिको, सिंगापुर और ऑस्ट्रेलिया हैं। इसके बावजूद आगे की स्थितियां अच्छी नजर नहीं आ रही हैं। वर्तमान सरकार के बहुत से देशों को ऑन-अराइवल वीजा पर बहुत सी रियायतें देने और 113 देशों के लिए 16 हवाई अड्डों पर ई-वीजा शुरू करने के बावजूद चालू कैलेंडर वर्ष में अक्टूबर तक आने वाले पर्यटकों की तादाद महज 4 फीसदी बढ़ी है और कोई भी वर्ष के शेष महीनों में भारी संख्या में पर्यटकों के आने की संभावना नहीं जता रहा है। भारत में कम पर्यटक तो आ ही रहे हैं। इसके साथ ही वे यहां कम समय भी बिता रहे हैं। संसद में एक सवाल के जवाब में संस्कृति मंत्री महेश शर्मा ने कहा कि अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों का औसत ठहराव अब घटकर 18 से 20 दिन रह गया है, जो वर्ष 2012

में 20 से 22 दिन था। भारत में स्मारकों, प्राकृतिक सुंदरता और आतिथ्य में जितनी विविधता है, वह किसी एक देश में नहीं मिल सकती। लेकिन फिर भी भारत आगंतुक पर्यटकों के लिहाज से एशिया के 10 शीर्ष देशों में शामिल नहीं है। पिछले साल भारत में 76 लाख पर्यटक आए थे, जिनमें अनिवासी भारतीय भी शामिल थे।

वहीं एक छोटे से देश सिंगापुर में आने वाले पर्यटकों की संख्या 1.18 करोड़ रही थी। 5.5 करोड़ से अधिक पर्यटकों के अतिथि बनने वाले चीन के आसपास आना तो बहुत दूर की कौड़ी है। सरकार अभियान के हिसाब से सोचती है और उद्योग रियायतों की दृष्टि से। दोनों ने मौकों के उपयोग को सीमित कर दिया है। बहुत से लोग आतंक को चुनौती मानते हैं, जो भले ही माओवादी (सबसे बड़ा हत्यारा) हों, इस्लामी हों, हिंदू, उत्तर-पूर्व के उग्रवादी या अन्य हों। हालांकि इसका भी मुकाबला किया जा सकता है। अगर हम शीर्ष 10 पर्यटन देशों से सीख लेना चाहते हैं तो इसका जवाब यह है कि बुनियादी स्वच्छता एवं सुरक्षा पर ध्यान दिया जाना चाहिए। पर्यटन के लिहाज से विश्व के 10 अग्रणी देशों में पर्यटक आसानी से सार्वजनिक परिवहन का इस्तेमाल कर सकते हैं और सुरक्षा को लेकर सुनिश्चित (हाल तक) होते हैं। भारत के कुछ हिस्से यह सुविधा अपने खुद के नागरिकों को भी मुहैया करा सकते हैं। उदाहरण के लिए श्रीलंका में मामूली गृह युद्ध के वर्षों में भी विदेशी पर्यटकों की लगातार आवक बनी रही, जिसकी वजह उनका सुरक्षा की गारंटी देना है। वैश्विक आर्थिक मंच के 2015 के यात्रा एवं पर्यटन प्रतिस्पर्धी सूचकांक में 141 देशों में भारत 52वें पायदान पर रहा। भारत को औसत रैंकिंग मिलने की वजह पर्यटन से संबंधित बुनियादी ढांचे में 109वीं रैंक मिलना, स्वास्थ्य एवं पोषण में 114 और सुरक्षा में 97वीं रैंक मिलना है।

यात्रा एवं पर्यटन का योगदान भारत के सकल घरेलू उत्पाद में भी कम हो रहा है। वर्ष 2000 में इसका योगदान 9.2 फीसदी था, जो वर्ष 2014 में घटकर 6.8 फीसदी रह गया। इससे पता चलता है कि भारत में मेड इन इंडिया का पूरा फायदा नहीं उठाया गया। अब इसमें अवसर न पैदा करना हमारी खामी है।



बिजय सिन्हा

पूर्व के संपन्न पड़ोसियों से बढ़ती नजदीकियां

दक्षिणपूर्वी एशियाई देशों के साथ रिश्तों की टूटी कड़ियां जोड़ने में मशक्कत करनी होगी लेकिन इन पड़ोसी देशों के साथ बेहतर रिश्ते देश के लिए बेहद फायदेमंद साबित होंगे। बता रहे हैं अशोक लाहिड़ी

दक्षिण पूर्व एशिया में व्यापक आर्थिक और रणनीतिक रिश्तों को भुनाने के लिए पर्दे के पीछे काफी वार्ताओं की दरकार है। इसमें उच्च स्तर पर होने वाली वार्ता भी शामिल है। ऐसा प्रतीत होता है कि नीति निर्माता 'लुक ईस्ट' से आगे बढ़कर 'एक्ट ईस्ट' की स्थिति में आ गए हैं। नवंबर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का मलेशिया और सिंगापुर दौरा भारत के पूर्व में स्थित इन संपन्न पड़ोसियों का उनका आठवां दौरा था। इन आठ दौरों में म्यांमार का दौरा भी शामिल था, जो बहुत ज्यादा धनी देश तो नहीं है। उसके अलावा प्रधानमंत्री ने दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के संघ (आसियान) का भी दौरा किया लेकिन ऑस्ट्रेलिया और फिजी के दौर इसमें शामिल नहीं होंगे।

सदियों तक रहे औपनिवेशिक शासन के दौरान पूर्व के साथ भारत के रिश्तों की टूटी कड़ी को जोड़ना बेहद चुनौतीपूर्ण है। अंकोरवाट और बोरोबुदूर की स्मृतियां कमजोर पड़ गई हैं। पूर्व के साथ भारत का संपर्क वहीं तक रहा जितना ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों ने चाहा, जैसे 1840 के प्रथम अफीम युद्ध के दौरान बंगाल से स्वयंसेवकों या मद्रास नेटिव इन्फैंट्री को भेजा गया। अतीत की गाथाएं भी इस मामले में मददगार नहीं रहीं।

मसलन एक समय कोलकाता का क्या जलवा था या इस पर गौर करने की अनिच्छा कि पूर्व ने इतनी तरक्की कैसे की। शीत युद्ध के दौरान जहां भारत ने गुटनिरपेक्षता को लेकर प्रतिबद्धता जताई, वहीं पूर्व के इन मौजूदा संपन्न देशों को साम्यवादी विरोधी अमेरिकी खेमों का सदस्य मानकर खारिज कर दिया गया। इन कमजोरियों से उबरने के लिए काफी

व्यावहारिकता और गंभीरता की दरकार है।

आसियान का खुद का इतिहास उसके सदस्यों द्वारा दिखाई गई व्यावहारिक गंभीरता की मिसाल पेश करता है। मलाया, फिलीपींस और थाईलैंड ने 1961 में मिलकर दक्षिणपूर्व एशिया संघ (आसा) का गठन किया, जो सबा और बोर्नियो को लेकर मलाया और फिलीपींस के टकराव के बाद खत्म हो गया। फिर मेफिलिंडो (मलेशिया, फिलीपींस और इंडोनेशिया का महासंघ) के गठन की प्रस्तावित योजना ने इंडोनेशिया और मलेशिया के बीच विवाद के चलते अपने निर्माण की प्रक्रिया में ही दम तोड़ दिया। फिर 9 अगस्त, 1965 को सिंगापुर मलेशिया से अलग होकर स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। बेहद मुश्किल वक्त में 8 अगस्त, 1967 को बैंकॉक घोषणापत्र पर सहमति बनी, जिससे आसियान के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ, जिस पर इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस, सिंगापुर और थाईलैंड ने हस्ताक्षर किए। 1970 के दशक तक क्षेत्रीय राजनीतिक अस्थिरता से निपटना आसियान का प्रमुख मकसद था, तब से लेकर अब तक उसने एक लंबा सफर तय किया है। साझा प्रभावी तरजीही प्रशुल्क योजना के साथ यह एक मुक्त व्यापार क्षेत्र बन गया है। जनवरी 1984 में आजादी के तुरंत बाद ब्रुनेई दारुसलाम इसका छठा सदस्य बना। वर्ष 1989 वियतनाम के कंबोडिया से बाहर निकलने के बाद वियतनाम और आसियान सदस्य देशों के व्यावहारिक नेता उसे इस समूह में लाने के लिए तत्पर हुए और जुलाई, 1995 में वियतनाम इसका सातवां सदस्य बना। लाओस और म्यांमार जुलाई, 1997 में इसमें शामिल हुए। उनके बाद 1999 में

कंबोडिया भी इससे जुड़ गया। चीन की बढ़ती चुनौती को देखते हुए वर्ष 1968 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आसियान के साथ रणनीतिक सहयोग बढ़ाने के लिए सिंगापुर और मलेशिया का दौरा किया। क्षेत्रीय सहयोग के व्यापक एजेंडे के बिना उससे अपेक्षित नतीजे हासिल नहीं हो पाए। यहां तक कि वर्ष 1976 में आपातकाल के दौरान भी भारतीय मंत्रियों ने इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस, सिंगापुर और थाईलैंड जैसे सभी मूल सदस्य देशों का दौरा किया लेकिन उनसे बहुत कुछ हासिल नहीं हो पाया। सोवियत संघ के विघटन के बाद सार्थक बातचीत तभी शुरू हो पाई जब भारत और आसियान के घरेलू और विदेश नीति लक्ष्यों के बीच बेहतर जुड़ाव हुआ। प्रधानमंत्री नरसिंह राव के कार्यकाल में शुरू हुए आर्थिक सुधारों के साथ भारत 1992 में कुछ श्रेणियों में संवाद (सेक्टरल डायलॉग) साझेदार बन गया, 1995 में पूर्ण संवाद साझेदार बना और 1996 में आसियान क्षेत्रीय मंच का सदस्य बन गया। वर्ष 1996 में एशिया-यूरोप (एसेम) बैठक के संदर्भ में आसियान ने दिसंबर 1997 में चीन, दक्षिण कोरिया और जापान को लेकर एक विशेष रिश्ता शुरू किया और वर्ष 1999 में उसे 'आसियान प्लस 3' के रूप में संस्थागत रूप दिया। इसमें कोई हैरानी नहीं थी। आर्थिक कद के लिहाज से प्लस 3 एशिया में सबसे बड़ी ताकत थे। हालांकि भारत सहित एसेम में समय के साथ नए सदस्य जुड़ रहे थे लेकिन आसियान और प्लस 3 का विशेष रिश्ता भी परवान चढ़ता रहा, खासतौर से 1997 के एशियाई वित्तीय संकट के दौर में इन दोनों समूहों के बीच बहुत सहयोग बढ़ा।

पिछले महीने आयोजित हुए 27वें आसियान सम्मेलन के मेजबान देश मलेशिया ने अतीत में भारत-आसियान संबंधों को मजबूती देने में अहम भूमिका निभाई। हालांकि तुनकू अब्दुल रहमान के प्रधानमंत्रित्व काल में एक मुस्लिम देश होने के बावजूद मलेशिया ने अपने अंतरराष्ट्रीय संबंधों को केवल धर्म तक सीमित न रखकर व्यापक परिधि में देखा। उसने न केवल 1962 में चीन के साथ युद्ध बल्कि 1965 में पाकिस्तान के साथ जंग में भी भारत का समर्थन किया। अक्टूबर, 1965 में उसने पाकिस्तान के साथ राजनयिक रिश्ते खत्म कर दिए। मगर रहमान के बाद खासतौर से महातिर बिन मुहम्मद के शासनकाल में पाकिस्तान के साथ करीबी रिश्तों ने भारत-मलेशिया संबंधों की तासीर बिगाड़ दी।

अयोध्या में बाबरी मस्जिद विध्वंस का हवाला देते हुए मलेशिया ने अलग भारत-आसियान सम्मेलन के प्रस्ताव का विरोध किया, जिस प्रस्ताव का अन्य सदस्य देश मजबूती से समर्थन कर रहे थे। सौभाग्यवश, वर्ष 2003 में महातिर के सत्ता से बाहर होने के बाद भारत-मलेशिया संबंध फिर प्रगाढ़ होने की राह पर बढ़े हैं। यह स्पष्ट है कि आसियान के साथ सहयोग से भारत को बहुत लाभ होगा। आसियान 10 देशों का समूह है, जिनकी कुल आबादी 62.5 करोड़ और सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का आकार 2.5 लाख करोड़ डॉलर है। यह भारत के पड़ोस में स्थित एक आर्थिक महाशक्ति है, जिसका प्रभाव लगातार बढ़ रहा है। प्रधानमंत्री मोदी ने कुआलालंपुर में आसियान देशों के प्रमुखों के साथ 21 नवंबर को बैठक की। इस बैठक की अध्यक्षता करने वाले मलेशिया के प्रधानमंत्री नजीब रजाक ने वस्तुओं के व्यापार को और उदारीकृत बनाने के साथ ही यह भी कहा कि आसियान-भारत वस्तु व्यापार अनुबंध के कार्यान्वयन और व्यापार सुगमता मुद्दों को सुलझाना अभी बाकी है। उन्होंने यह भी कहा कि क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी अनुबंध को भी संतुलित तरीके से पूर्ण रूप देने की जरूरत है।

भौतिक, संस्थागत और जनसहभागिता जैसे तीनों पैमानों पर भारत-आसियान के बीच संपर्क सुधारने में भारत की पहल का रजाक ने स्वागत किया। मिसाल के तौर पर उन्होंने आसियान-भारत रणनीतिक साझेदारी के तहत संपर्क संबंधी परियोजनाओं को पूरा करने के लिए आसियान सदस्य देशों को 1 अरब डॉलर का कर्ज मुहैया कराने की भारत की पेशकश और आसियान-भारत व्यापार एवं निवेश केंद्र बनाने के लिए धन उपलब्ध कराने की घोषणा का उल्लेख भी किया। दक्षिणपूर्व एशिया के साथ व्यापक आर्थिक एवं रणनीतिक रिश्तों की बहाली की कोई आसान राह नहीं है। इसमें गंभीरता का भाव अवश्यभावी है और दो सकारात्मक कारणों से उसके कारगर होने की उम्मीद है। पहला तो यही कि एक तेजी से वृद्धि करती हुई बड़ी अर्थव्यवस्था के तौर पर भारत के उभार की संभावना। जब किसी के अच्छे दिन आने की संभावना नजर आती है तो दूर के रिश्तेदार भी नजदीकियां बढ़ाने लगते हैं। दूसरा यही कि सिंगापुर और वियतनाम के रूप में एशियाई देशों में भारत के कुछ विश्वसनीय सहयोगी हैं और दक्षिणी चीन सागर में चीन के दावों को लेकर स्पष्ट रूप से नजर आने वाली असहजता भी एक पहलू है।

AFTER THE DELUGE

The Monsoon fury in Chennai lays bare the crisis of governance in the city

The Indian Express, 3-12-15

THE NORTHEAST MONSOON in Chennai this year — the severest in over a hundred years — has wreaked unprecedented havoc. When the rain returned after a lull over the weekend, the city, which had already taken a pounding in November, could not cope. Chennai's airport, railway stations and bus stations have been closed since Wednesday. The city's two main rivers, the Adyar and Cooum, are flooded and reservoirs and tanks in the outskirts are overflowing. There has been no electricity in large parts of the city for over 24 hours. At least 65 people have died since the rains began late October. Business has reported losses of over Rs 500 crore and at least 21 work days have been lost. The navy and disaster management teams are undertaking rescue missions as the threat of a food and water and health crisis looms.

The seasonal rain (October-December) so far this year has been estimated to be 121 cm — the annual average is 43cm and the recorded peak for the corresponding period was 108.8 cm in 1918. However, the intensity of the rains could not have caused this total collapse of infrastructure if the city administration had done its job. The heavy rain has exposed the creaking public infrastructure in Chennai — like the 2005 deluge did in Mumbai or the 2014 floods in Srinagar. One of the largest manufacturing and commercial hubs in the country, Chennai, understandably, has been expanding at a fast pace. From heavy industries like automobiles and auto components to software, BPOs, education and healthcare, the city has built a wide economic base and is home to a cosmopolitan workforce. Yet, the administration has been slow to augment the infrastructure to take the extra load of people and vehicles. Unplanned and ill-thought construction, especially on river, tank and lake beds, has led to the choking of water bodies that accommodated flood waters in the past and storm water channels. Rivers, natural outlets for flood waters, are choked with garbage, sewage and silt. Drainage is non-existent in the newer areas of the city while civic bodies go slow over routine pre-monsoon municipal works.

In Chennai and elsewhere, the approach to urban governance needs to change. Mundane aspects of city administration like building and maintaining water, drainage and sewage systems, mass transport facilities, etc are ignored as the conversation shifts to concepts like smart cities. Civic bodies need massive infusions of funds, skills and technologies if cities are to become liveable urban spaces. That's the lesson from the Chennai deluge.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

वर्ष 8 अंक 240 4-12-15

शहरीकरण पर सवाल

महज 24 घंटों के दौरान चेन्नई में 345 मिलीमीटर वर्षा ने वर्ष 1901 का रिकॉर्ड तोड़ दिया और इससे शहर के अधिकांश हिस्से जलमग्न हो गए हैं। इसकी विभीषिका चेन्नई से भी दूर दक्षिणी आंध्र प्रदेश के तट तक महसूस की जा रही है, जहां लोग असहाय नजर आ रहे हैं और 200 से भी अधिक लोगों की मौत हो गई। कारखाने और

विद्यालय बंद हो गए हैं, इमारतों की पहली मंजिल तक पानी पहुंच गया है और हवाई अड्डे को 6 दिसंबर तक बंद कर दिया है। व्यापक रूप से साझा की जा रही तस्वीरों में नजर आ रहा है कि पानी अडयार नदी पर बने पुल की रेलिंग तक पहुंच गया है। संकट की इस घड़ी में चेन्नई शहर के बाशिंदों ने प्रेरक मिसाल कायम करते हुए अजनबियों

के लिए अपने घरों के दरवाजे खोल दिए हैं और वे प्रभावितों के लिए खाने और रहने का बंदोबस्त करने में जुटे हुए हैं। राज्य सरकार का दावा है कि खाने के 2 लाख से भी अधिक पैकेट वितरित किए गए हैं। सेना, नौसेना और वायुसेना कंधे से कंधा मिलाकर राहत कार्यों में लगी हैं।

हालांकि इस वाक्ये से यह स्पष्ट सबक लिए बिना नहीं रहा जाना चाहिए कि क्या मूसलाधार वर्षा इतना विनाशकारी प्रभाव डाल सकती है। कहा जा रहा है कि तमिलनाडु के उत्तर में चक्रवाती दबाव बनने के बाद संबंधित संस्थाओं को भारी वर्षा की आशंका को लेकर पहले ही सूचित किया जा चुका था। इस चेतावनी को देखते हुए न केवल तैयारी नाकाफी थी बल्कि नगर से

लगी चेंबरमबक्कम झील से बुधवार को 30,000 क्यूसेक अतिरिक्त पानी छोड़ा गया, जिससे शहर के कुछ और इलाके बाढ़ की जद में आ सकते हैं। ऐसे में राज्य सरकार और चेन्नई नगर निगम से यह सवाल पूछा जाना चाहिए कि क्या उनकी कोई जिम्मेदारी बनती है। मिसाल के तौर पर शहर के 900 किलोमीटर लंबे जल निकासी तंत्र के उन्नयन का काम अब तक पूरा हो जाना चाहिए था लेकिन उसमें देरी हो गई है।

जहां इस बाढ़ के भारी परिणाम भुगतने पड़े हैं, वहीं चेन्नई को इस सत्र में पहले भी बाढ़ की स्थिति का शिकार होना पड़ा है, जिसकी वजह भी सामान्य से काफी अधिक वर्षा थी। ऐसी विषम मौसमी परिघटनाएं अब बेहद आम होती जा रही हैं और मौसम विज्ञानी

उन्हें वैश्विक तापवृद्धि का नतीजा मान रहे हैं। यह घटना पेरिस जलवायु वार्ताओं के दौरान भारत की वार्ताओं में एक हितकारी कार्यवाही के रूप में उल्लिखित होनी चाहिए कि यह देश मानवजनित जलवायु परिवर्तनों से भी अधिक जोखिमों का सामना कर रहा है और वार्ताकारों को संयुक्त राष्ट्र प्रायोजित इस पहल में कुछ अतिरिक्त कदमों के बारे में विचार करना चाहिए, जिसे वैश्विक तापवृद्धि में तेजी को रोकने की अंतिम बेहतर कोशिश माना जा रहा है। इसमें अनियोजित शहरीकरण में तेजी की भी अहम भूमिका है। चेन्नई दलदल, कच्छ भूमि और जलमार्गों पर बसा शहर है। मगर शहरी नियोजन में ऐसे नैसर्गिक निकासी तंत्र को उपेक्षित किया गया और उसके पास ऐसी आपात स्थितियों के

लिए भी कोई योजना नहीं। करोड़ों की आबादी वाले शहर में निकासी तंत्र केवल 6,50,000 की आबादी को ध्यान में रखकर बनाया गया था। कूवम और अडयार नदियों पर भी अतिक्रमण बढ़ता गया। शहर में आधी से अधिक नमभूमियां विकास की भेंट चढ़ चुकी हैं। शहर में जलाशयों की संख्या भी 150 से घटकर 27 रह गई है। हरित दायरे में नाटकीय कमी ने भी इस समस्या को गहरा दिया कि जमीन पर पानी ज्यादा नहीं टिक सकता। मौजूदा सरकार के 'स्मार्ट सिटी' पर जोर देने की मंशा में खराबी नहीं है। मगर ऐसी बुनियादी सुविधाओं पर सबसे पहले गौर किया जाना चाहिए। समय आ गया है कि लचर नियोजित शहरीकरण को लेकर भारत की प्राथमिकताओं पर प्रश्न किए जाएं।